शबद

भाग - ४

सूर्य की किरणों में सूर्य के समस्त गुण मौजूद हैं, यह –

सात रंग (seven colours)

जीवन – रौं (जीवन – शक्ति)

गर्मी

प्रकाश

निर्मलता, आदि

के गुणों की –

अनन्त

इकसार

सहज स्वभाव

सर्व व्यापक

देन आदि से ही, सूर्य **अपनी किरणों द्वारा, समस्त संसार को प्रदान करता रहा है ।**

इस धूप के लिए हमने कोई –

विचार नहीं किया,

योजना नहीं बनायी

माँग नहीं की

परिश्रम नहीं किया

कीमत नहीं दी ।

यदि कभी हम इस ईश्वरीय देन अथवा **'धूप' से वंचित होते हैं**, तब इसमें 'धूप' या धूप के स्त्रोत **'सूर्य' का कोई दोष नहीं** ।

जब हम किसी कारणवश **'धूप' से दूर हो जाते हैं** । तब 'धूप' के प्रकाश में अपने आपको **पेश करते हैं**, तब फिर धूप की सुखदायी **उष्णता तथा प्रकाश अनुभव करते हैं । अन्धेरे में से निकल कर अपने आप को 'धूप' की उपस्थिति में 'पेश' करना ही हमारी 'कमाई' या यत्न है** ।

इसी प्रकार जब हम 'शबद – सुरति' की कमाई द्वारा **प्रभु की उपस्थिति में रहते हैं**, तब हमें अकाल पुरुष की **दिव्य देन सहज ही प्राप्त हो जाती है** । इस प्रकार '**प्रकाश**' तथा '**उष्णता**' को '**अनुभव करना**' या '**वंचित रहना**', हमारे मूल यत्न अथवा **'शबद – सुरति' की कमाई पर निर्भर है** ।

प्रभु से प्राप्त अनेक बख्शिशों में से, सब से बहुमूल्य, दुर्लभ तथा **बड़ी देन 'शबद' ही है** । 'शबद के प्रकाश से ही समस्त **दिव्य गुण तथा सुख आदि सहज स्वभाव प्राप्त हो जाते हैं** । इसलिए शबद का अनुभव प्रकाश ही **ईश्वरीय देन की निशानी, चिन्ह या लक्षण हैं** ।

रामदास सोढी तिलकु दीआ गुर सबदु सचु नीसाणु जीउ ।। (पृ. ९२३)

एको सबदु सचा नीसाणु ।। पूरे गुर ते जाणै जाणु ।। (पृ. ११८८)

यहाँ पर एक हकीकत का जिक्र करना अनिवार्य है, कि गुरु से प्राप्त 'शबद' की बख्शिश तथा अन्य अनेक भेटों को, जिज्ञासु की साधाना से तोला नहीं जा सकता । दूसरे शब्दों में, इस **देन या दान** के समक्ष, जिज्ञासु की साधना या कमाई 'नाम मात्र' ही होती है । जितनी प्राप्ती की उम्मीद या आशा रख कर जिज्ञासु अपनी परमार्थिक साधना या यत्न करता है, **उससे अनन्त – गुना ज्यादा गुरु की ओर से बख्शिश प्रदान होती है** । इन बख्शिशों तथा बरकतों को प्राप्त करने के उपरान्त, जिज्ञासु के मन में उत्पन्न खुशी, आनन्द तथा शुक्राने को सतिगुरु जी ने 'निहाल' शब्द द्वारा दर्शाया है ।

गुर कै सबदि हरि **नदरि निहाले** ।।
गिआन अंजनु पाए गुर सबदी **नदरी नदरि मिलाइदा** ।। (पृ. १०६५)

गुरि तुठै नामु दृड़ाइआ **हम कीए सबदि निहालु ।।**
जन नानकि अतुटु धनु पाइआ हरि नामा हरि धनु मालु ।। (पृ. १३१५)

एह किनेही दाति आपस ते जो पाईऐ ।।
नानक सा करमाति साहिब तुठै जो मिलै ।। (पृ. ४७४)

'नदरि–निहाल' की भावुक गहराई को समझने के लिए 'माँ–प्यार' का उदाहरण दिया जाता है –

माँ के हृदय में अपने बच्चे के लिए सहज स्वभाव, एक **प्यार की 'रौं'** (लहर) चल रही होती है, परन्तु जब कभी बच्चा भोले भाव किसी प्रेममयी भावना से माँ को **'रिझा' लेता है**, तब माँ के हृदय में बच्चे के लिए **असाधारण प्यार उमड़ पड़ता है** । इस तीव्र **'माँ–प्यार' के मनोभाव के उछाल में** माँ का सारा **'अपनत्व'** अथवा **'प्यार' 'पिघलकर' उबल कर उसकी अनोखी हरकतों में प्रकट होता है** तथा वह बच्चे को विशेष ढंग से **लाड लडाती है,** सुन्दर लाड भरे शब्दों से सम्बोधित करती है । उसके गहरे प्रेम भरे हृदय में से बच्चे के लिए **अनेक शुभ इच्छाएँ** तथा **आर्शीवाद सहज ही 'फूट' पड़ते हैं** । माँ का खून तथा सारा 'प्यार' (जुस्सा) **प्रेम उष्णता से पिघलकर, 'दूध' का रुप धारण कर लेता है** तथा उसकी छातियों में से **उछल कर** (over-flow) **बह उठता है** । यह समस्त खेल **'माँ–प्यार' की प्रेम भावना के तीव वेग के उछाल का प्रकटाव या जादू है** । इस प्रकार यह असाधारण प्रकृति के करिश्में, कई बार साधारण नियमों से बाहर हो कार्यान्वित होते हैं ।

ठीक इसी प्रकार 'भगवान' के भक्त या प्यारे जब कभी **भोले–भाव 'ईश्वरीय प्रेम' में मतवाले होकर**, श्रद्धा भाव की तीव्रता में, सहज स्वभाव कोई **श्रद्धा की भेंट** पेश करते हैं, तब माँ की तरह, अपने 'प्यारे भक्त' की अनोखी **भोली–भाली प्रेम भावना के जवाब** (response) **में परमेश्वर की कृपा तथा हृदय भी अपने 'प्यारे भक्त' पर रीझ कर उछलता है** तथा अपने दर घर से **ईश्वरीय देन– 'नाम', 'प्रेम प्याला' तथा 'सेवा' आदि, तथा अन्य**

अनेक मुँह मांगी बरवशिशों के खुले भन्डार सौंप देता है, जिसे गुरबाणी में **'नदरी नदरि निहाल'** कहा गया है, जिस के गुरु इतिहास में अनेक उदाहरण मिलते हैं।

भाई गुरदास जी हीरा, हुण्डी तथा बोहड़ के बीज के उदाहरण देकर दृढ़ करवाते हैं कि शबद को हृदय में बसाने से जो बरव्शिश और बरकतें सतिगुरु जी प्रदान करते हैं, उनका अनुमान लगाना कठिन है।

जैसे हीरा हाथ मै तनक सो दिखाई देत,
मोल कीए ते दमकन भरत भंडार जी ।।
जैसे बर बाधे हुंडी लागत न भार कछू,
आगै जाइ पाईअति लछमी अपार जी ।।
जैसे बट बीज अति सूखम सरूप होत,
बोए सै बिबिध करै बिरखा विथार जी ।।
तैसे गुर बचन सचन गुर सिखन मै
जानीऐ महातम गए ही हरिदुआर जी ।। (क. भा. गु. ३७३)

गुरबाणी में **'पंच शबद'** शब्द बहुत बार प्रयोग किया है। यह शब्द केवल अलकांरिक रूप में **'प्रेममय आत्मिक आनन्द' को दर्शाने का एक संगीतिक ढंग है**। कई जिज्ञासु 'पंच शबद' से पाँच प्रकार के यन्त्रों की आवाजों को अन्त करण या सुरति में सुनने को ही अनहद नाद माने हुए हैं। कई मत पाँच शबद वाले 'मंत्र' को 'पंच शबद' माने हुए हैं। इस प्रकार हम व्यर्थ वाद विवाद में पड़ जाते हैं।

इस बहुपक्षी 'वाद विवाद' तथा भ्रम का निवारण करने के लिए निम्नलिखित विचार दी जाती है।

'शबद' की कमाई से पहले हमारे मन, चित्त, बुद्धि में विकारों का बोलबाला तथा व्यवहार होता है। विकारी मन में से 'निम्न ख्याल तथा भावनायें' अपने आप अनजाने में तथा (सहज स्वभाव) 'फुव्वारे' या झरने (fountain or spring) की भाँति 'लगातार' फूटते रहते हैं तथा मनुष्य को परेशान करते हैं। इन निम्न ख्यालों को केवल मनुष्य ही अपनी सुरति में चुपचाप अनुभव करता है।

परन्तु जब जिज्ञासु साध संगति में शबद की कमाई करता है, तब धीरे–

निर्मल कर्म

ईश्वरीय आनन्द

आत्मिक खिड़ाव

भाणा, आदि

अनेक दिव्य गुणों के रव्याल, मनोभाव तथा विचार 'झरने' या 'फुव्वारे' की भांति उसकी सुरति या जमीर में अपने आप लगातार उत्पन्न होते रहते हैं।

इस प्रकार **सुरति में 'शबद' कई तरंगों, रंगों, रूपों में प्रकाशित तथा प्रवृत्त होता है** ।

इन आन्तरिक आत्मिक रव्यालों, मनोभावों तथा **प्रेम स्वैपनाओं की तरंगों को ही 'अनहद शबद' या 'पंच शबद' कहा गया है** । यहाँ पर यह बताना आवश्यक है कि जैसे पहली अवस्था में निम्न रव्यालों तथा मनोभावों को पैदा करने के लिए कोई विशेष उद्यम, जोर या साधना नहीं करनी पड़ती, इसी प्रकार **'शबद–सुरति' के मिलाप होने पर**, रव्यालों, मनोभावों तथा **स्वैपनाओं की तरंगें अपने आप ही सुरति में** उत्पन्न होती तथा हिलोरें लेती है तथा जिज्ञासु को प्रभु चरणों में लीन रखती है। इसको ही –

अजपा–जाप
अनहद–शबद
पंच–शबद
'मन मधे हरि हरि रावना'
'पिरम पिआला चुप चबोला'
अनहद धुनि
गोबिंद गजिआ

कहा गया है।

इन दिव्य रव्यालों तथा मनोभावों की बुनियाद **'गुरु–प्रेम' ही होता है,** इसलिए इन में दिखावे या अहम की अंश लेशमात्र भी नहीं होती।

भाई गुरुदास जी ने स्पष्ट रूप से निर्णय दिया है, कि नाम का रसिक तो अपनी 'सुरति' को **'शबद' में लिवलीन करके 'पंच शबद' या संगीतिक**

आवाज की 'जगह' केवल प्रीतम का 'नाम' या 'शबद' ही सुनता है, तथा राग–नाद के झगड़े व्यर्थ समझकर केवल 'ईश्वरीय प्रेम' की 'चुप बोली', दिव्य भावनाओं का 'अनहद शबद' में लिवलीन होकर मस्त रहता है

सबद सुरति लिव साधसंगि **पंच सबद इक सबद मिलाए ।**
राग नाद संबाद लखि भाखिआ भाउ सुभाउ अलाए । (वा. भा. गु. ६/१०)

वाहगुरू गुरु सबदु लै **पिरम पिआला चुपि चबोला ।** (वा. भा. गु. ४/१७)

गुरमुखि सुनणा सुरति करि **पंच सबदु गुर सबदि अलापै ।**
(वा. भा. गु. ६/१८)

पंज सबद गुर सबद लिव पंजू पंजे पंजीह लाणै । (वा. भा. गु. ४०/२०)

पंच सबद धुनिकार धुनि तह बाजै सबदु नीसाणु ।। (पृ. १२९१)

साध संगति में गुर सबद की कमाई से, जिज्ञासु को गुरु घर से नगदो–नगदी 'देन' या 'बरकतें' प्राप्त होती हैं । इन 'वरदानों' या 'बख्शिशों' को यूँ दर्शाया जाता है ।

जितने भी दुख, कल क्लेश मनुष्य भोगता है, वह सब निम्न ख्यालों तथा कर्मों से उत्पन्न होते हैं । 'शबद' की कमाई द्वारा जिज्ञासु, मायिकी दुख–सुख से ऊँचा उठ कर, कभी–कभी क्षण भर आत्मिक सुख की झलक महसूस या अनुभव करता है । उस क्षण पल **आत्मिक सुख तथा रस की याद**, उसको बार बार **'शबद' की कमाई की ओर प्रेरित करती है ।**

'शबद' का अर्न्तमुख अभ्यास करने से, मन में 'शबद' की अनुभव विचार उत्पन्न होती रहती है, जिस कारण मन में चिंत्ता, अंदेशा आदि मायिकी विचार नहीं उत्पन्न होते तथा जिज्ञासु का मन किसी अनूठे **आत्मिक रस की तार का आकर्षण महसूस करता हुआ 'शबद–सुरति' की कमाई की ओर प्रेरित होता है ।**

साधारणतया ईर्ष्या, द्वेष काम आदि के प्रभाव अधीन मनुष्य की मति, बुद्धि तथा अन्तःकारण भ्रष्ट हो जाता है, या स्वार्थी हो जाता है तथा मनुष्य तबाही की ओर चल पड़ता है । दूसरी ओर 'प्रकाश रूप शबद' द्वारा मनुष्य की मति

तथा बुद्धि साधु संगति रूपी **सच्ची पाठशाला में घड़ी जाती है**, तथा वही मति तथा बुद्धि आत्मिक ज्ञान तथा उत्साह से भरपूर होने के कारण, निष्काम सेवा तथा परोपकार की ओर लग जाती है ।

अनेक जन्मों में से गुजरते हुए तथा इस जन्म की कुसंगति के प्रभाव में, मनुष्य भ्रम भुलावे की 'मायिकी काल कोठरी' या अज्ञानता के घोर अंधकार में विचरण करता है परन्तु गुर शबद के अनुभव ज्ञान द्वारा, यह सारा मायिकी संसार धुँए के 'पहाड़' की तरह नजर आता है तथा अज्ञानता का 'अंधकार' उड़ जाता है ।

अंतरि सबदु मिटिआ अगिआनु अंधेरा ।।
सतिगुर गिआनु मिलिआ प्रीतमु मेरा ।। (पृ. ७९८)

अंधिआरै दीपक आनि जलाए गुर गिआनि गुरू लिव लागे ।। (पृ. १७२)

मायिकी भुम भुलाव में मनुष्य अनेक दुख, क्लेश तथा चिंता फिक्र में भयभीत हुआ रहता है । 'शबद' के अनुभव प्रकाश में मायिकी भ्रम अंधकार मिट जाता है तथा जिज्ञासु आत्मिक आनन्दमयी जीवन व्यतीत करता है ।

गुर का सबदु वसै मनि जा कै ।।
दुखु दरदु भ्रमु ता का भागै ।। (पृ. १०७९)

सबदु बीचारि भरम भउ भंजनु अवरु न जानिआ दूजा ।। (पृ. १२३३)

साचे निरमल मैलु न लागै ।।
गुर कै सबदि भरम भउ भागै ।। (पृ. ६८६)

मनुष्य का मन त्रिगुणी माया के विस्माद में सोया रहता है । इस को गुरबाणी में 'जड़ता' या 'तन्द्रा' (nightmore) या दबाव वाली नींद भी कहा गया है । 'शबद सुरति' की कमाई से जिज्ञासु सहज स्वभाव **'आत्मिक जागृति' में आ जाता है ।**

नव हाणि नव धन **सबदि जागी** आपणे पिर भाणीआ ।। (पृ. ८४४)

इकि सबदु वीचारि सदा जन जागे ।। (पृ. १०४७)

तसकरु चोरु न लागै ता कउ **धुनि उपजै सबदि जगाइआ ।।** (पृ. १०३९)

धार्मिक क्षेत्र में बहुत से जिज्ञासु देखा–देखी दुविधा में, अनेक फोकट रस्मी कर्म काण्ड के रटन से पानी ही मथते रहते हैं। इस प्रकार उनकी मोटी वृत्ति अच्छे–बुरे, सच्च–झूठ आदि का निर्णय या फैसला करने में असमर्थ होती है। परन्तु साध संगति में शबद की कमाई करने से, जिज्ञासु की **'हँस वृत्ति' हो जाती है तथा वह सच–झूठ का निर्णय करने योग्य हो जाता है।**

गुरु परमेसरु नानक भेटिओ **साचै सबदि निबेरा ।।** (पृ ८७८)

साचि सूचा सदा नानक गुर **सबदि झगरु निबेरओ ।।** (पृ. ८४४)

सारे संसार का धार्मिक **ज्ञान तथा विज्ञान माया के तीन गुणों तक ही सीमित है**। धार्मिक ज्ञान पर निजी उक्तियों, युक्तियों, **समझदारी या सिआनापन की पर्त या रंगत चढ़ी होने के कारण**, जिज्ञासु की जिंदगी में ऊँचा तथा उत्तम परिवर्तन नहीं आता। दूसरी ओर विज्ञान केवल **कुदरत के छिलकों के अध्ययन में ही सन्तुष्ट है**। परन्तु जीवन में परिवर्तन लाने वाला 'आध्यात्मिक–तत–ज्ञान', **केवल गुर शबद की अनुभव विचार तथा कमाई द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है।**

चीनै गिआनु धिआनु धनु साचौ **एक सबदि लिव लावै ।।** (पृ १३३२)

गिआन अंजनु पाए गुर सबदी नदरी नदरि मिलाइदा ।। (पृ. १०६५)

'अनुभव ज्ञान' का आन्तरिक तजुरबा न होने के कारण, साधारण मनुष्य सांसारिक तथा धार्मिक पक्ष से दूरदृष्टि नहीं रखता। वह जीवन के हर मोड़ पर गलत कदम रख कर, बाद में दुखदायी परिणाम भोगता है। सतिगुरु जी की बाणी में दर्शायी जीवन दिशा, परखी तथा आजमाई हुई सच्चाई है। इसलिए जब जिज्ञासु साध संगति में मन वचन कर्म द्वारा **'शबद' की कमाई करता है, तब दिव्य दृष्टि प्राप्त हो जाने के कारण** उसके सांसारिक, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक तथा घरेलु कर्म–क्रिया सारे संसार के लिए **सुखदायी तथा आदर्शनीय होते हैं।**

नानक दृसटि द्रीघ सुखु पावै गुर सबदी मनु धीरा ।। (पृ ११०७)

पिछले जन्म के संस्कार तथा वर्तमान जहरीले वातावरण के प्रभाव में इन्सान अपनी निम्न रुचियों की पूर्ति के लिए मलिन प्रकार की संगति मनोरंजन साहित्य आदि में **सहज–स्वभाव प्रवृत रहता है** । परन्तु जब गुरु कृपा के फलस्वरूप, जिज्ञासु साध संगति में **'शबद' का रस तथा मिठास चखता है,** तब वह **सहज–स्वभाव** स्वतः ही निम्न प्रकार की इन्सानी, किताबी तथा ख्याली संगति से अलिप्त रह कर, **दिव्य मंडल में विचरण करने की युक्ति सीख लेता है** ।

सदा अलिपतु रहै गुर सबदी साचे सिउ चितु लाइदा ।। (पृ. १०६१)

वास्तव में ज्ञान तथा कर्म इन्द्रिय हमारे विकारी मन के हथियार है । इसलिए अनजाने में ही हमसे अनेक मानसिक तथा शरीरिक पाप होते रहते हैं । **परन्तु 'शबद' की कमाई करने से जीवन 'आत्म परायण' हो जाता है,** तथा पिछले तथा इस जन्म के समस्त पाप नाश हो जाते हैं ।

साच सबदु हिरदे मन माहि ।।
जनम जनम के किलविख जाहि ।। (पृ. ११४३)

गुर का सबदु काटै कोटि करम ।। (पृ. ११९५)

गुरबाणी की पंक्ति –

माइआ बिआपत बहु परकारी ।। (पृ. १८२)

के अनुसार, अनेक रंग वाली मोहक माया, मनुष्य के मन को प्रभावित करके, इसके अन्दर आशा तथा तृष्णा की आग बढ़ाती रहती है, जिस कारण अपनी इच्छाओं की पूर्ति करने के लिए जीव के अन्दर **'मानसिक तनाव'** (mental tension) भी बढ़ता जाता है । इस भयानक **'भंवर' या 'अग्निशोक सागर' में से केवल 'शबद' की कमाई द्वारा ही निकला जा सकता है** । गुर शबद का बार–बार अभ्यास ही विचित्र रंग बिरंगी **मायिकी भूख को 'शान्त' कर सकता है** ।

अगिआनु तृसना इसु तनहि जलाए ।।
तिस दी बूझै जि गुर सबदु कमाए ।। (पृ. १०६७)

हउमै मारि तृसना अगनि निवारी **सबदु चीनि सुखु होई हे ।।** (पृ. १०४५)

गुर का सबदु अंमृतु है **सभ तृसना भुख गवाए ।।** (पृ. ८५०)

'अध्यात्मिक विस्माद' त्रिगुण मायिकी मंडल के आगे का खेल है । इसलिए त्रिगुण मायिकी मंडल में विचरण करने वाले दार्शनिक, लेखक, कवि तथा कलाकार आदि, अपनी रचनाओं में **'ईश्वरीय विस्माद' का अनुभव नहीं करा सकते । 'ईश्वरीय तथा आनन्दमय विस्माद' का अनुभव केवल 'शबद' द्वारा ही हो सकता है ।**

उतभुजु चलतु कीआ सिरि करतै **बिसमादु सबदि देखाइदा ।।** (पृ. १०३७)

ता का अंतु न जाणै कोई ।। पूरे गुर ते सोझी होई ।।
नानक साचि रते बिसमादी बिसम भए गुण गाइदा ।। (पृ. १०३६)

धर्म धारण करके अपनी आत्मिक उन्नति के लिए जिज्ञासु अनेक साधनाएं जैसे कि जप, तप, तीर्थ, कर्म – काण्ड, संयम आदि अपनाता है । परन्तु इन सब लम्बी तथा कठिन साधनाओं द्वारा भी उसकी कोई आत्मिक उन्नति नहीं होती । इसलिए सतिगुरु जी ने जिज्ञासु की आत्मिक उन्नति के लिए **'शबद' की कमाई को सब से उत्तम जप, तप, तीर्थ, संयम आदि बताया है ।**

अंतरि जपु तपु संजमो गुर सबदी जापै ।। (पृ. १०९२)

सगले करम धारम सुचि संजम जप तप तीरथ सबदि वसे ।। (पृ. १३३२)

गुरबाणी की पंक्ति – 'गुर कै सबदि रहिआ भरपूरे' अनुसार प्रभु, 'शबद' द्वारा हमारे हृदय तथा समस्त सृष्टि में व्यापक है तथा **'शबद' की कमाई द्वारा ही उसका अस्तित्व या निकटता अथवा समीपता अनुभव की जा सकती है ।**

सद ही नेड़ै दूरि न जाणहु ।।
गुर कै सबदि नजीकि पछाणहु ।। (पृ. १०६९)

जलि थलि महीअलि गुपतो वरतै
गुर सबदी देखि निहारी जीउ ।। (पृ. ५९७)

साहिबु मेरा सदा है **दिसै सबदु कमाइ ।।** (पृ. ५०९)

सदा हजूरि दूरि न जाणहु ।।
गुर सबदी हरि अंतरि पछाणहु ।। (पृ. ११६)

वर्तमान पदार्थिक ज्ञान विज्ञान तथा फिलोस्फियों द्वारा, मनुष्य का जीवन शान्तिपूर्वक तथा सदाचारिक बनने की अपेक्षा और भी निम्न तथा मलिन हो रहा है। **'प्रकाश रूप' 'शबद' की कमाई से** जिज्ञासु के अन्तः करण में **'अनुभव ज्ञान' की आंधी आती है**, जिससे भ्रम, वहम, **सहसा तथा दुविधा का अन्धेरा दूर हो जाता है तथा जीवन निर्मल बन जाता है, इस प्रकार सब तरफ परमात्मा के 'हाजरा–हजूर' (प्रत्यक्ष) तथा जाहरा–जहूर 'दर्शन' होते हैं ।**

देखौ भाई गान की आई आँधी ।।
सभै उडानी भ्रम की टाटी रहै न माइआ बाँधी ।। (पृ. ३३१)

सबदु दीपकु वरतै तिहु लोइ ।। (पृ. ६६४)

अंतरि बाहरि भालि सबदि निहालिआ ।। (पृ. ७५२)

सबदु चीनि् आतमु परगासिआ सहजे रहिआ समाई ।। (पृ. ७५३)

सतिगुर सबदि उजारो दीपा ।।
बिनसिओ अंधकार तिह मंदरि रतन कोठड़ी खुल्ी अनूपा ।। (पृ. ८२१)

असली सोने की पहचान करने के लिए, सोने के सारे लक्षण या गुणों की जानकारी होना अनिवार्य है। ठीक इसी प्रकार –

''करते की मिति करता जाणै कै जाणै गुरु सूरा ।।'' (पृ. ९३०)

अनुसार, **गुरू–शबद के प्रकाश द्वारा ही एक प्रभु को बूझा–चीन्हा जा सकता है। 'शबद' की कमाई के बिना** इन्सान मूल परमात्मा की प्रेमा भक्ति छोड़कर अनेक देवी देवताओं या अवतारों की उपासना में ही भटकता रहता है।

गुर सबदी एकु पछाणिआ एको सचा सोइ ।। (पृ. १२८५)

एको सबदु सचा नीसाणु ।। पूरे गुर ते जाणै जाणु ।। (पृ. ११८८)

तेरे दरसन कउ केती बिललाइ ।।

विरला को चीनसि गुर सबदि मिलाइ ।। (पृ. ११८८)

नानक साहिबु सबदि सिञापै साचा सिरजणहारा ।। (पृ. – ६८८)

प्रभु एक है, परन्तु त्रिगुण मायिकी मंडल में हर एक वस्तु या चीज़ का जोड़ा है। जैसे कि – सुख – दुख, तू – मैं, ऊंचा – नीचा, अच्छा – बुरा आदि। अहम् के अधीन जन्म – जन्मों से माया में खचित रहने के कारण, मनुष्य का हर विचार, भावना, कर्म 'द्वि – भाव' में होता है। इस 'द्वैत भाव' भ्र या 'द्वजै – दोई' के भ्रम को केवल सतिगुरू का 'सहज आनन्दमय' **'एक शबद' ही दूर कर सकता है ।**

दूजा भाउ गुर सबदि जलाइआ ।। (पृ. १२९)

जह देखा तह एको सोई ।। **दूजी दुरमति सबदे खोई ।।** (पृ. १०५१)

अनदिनु भगति करहि दिन राती **दुबिधा सबदे खोई ।।** (पृ. ११३३)

स्थूल शारीरिक तथा सूक्ष्म मानसिक सेवा दोनों परमार्थ के मुख्य अंग गिने जाते हैं। मन के विचार, मनोभाव तथा इच्छाओं को साकार करने के लिए, शरीर मन का हथियार ही है। शारीरिक सेवा की बुनियाद, मार्गदर्शन तथा उत्साह भी मन में ही पैदा होता है। मन में निष्काम तथा **परोपकारी सेवा का चाव 'शबद' की कमाई द्वारा ही उत्पन्न होता है** । दूसरे शब्दों में, शबद की **अनुभव विचार तथा कमाई द्वारा ही सच्ची सेवा होती है ।**

गुर की सेवा सबदु वीचारु ।। (पृ. २२३)

साहिबु सेवनि् आपणा **पूरै सबदि वीचारि ।।** (पृ. ५१२)

सबदु वीचारि गहहि गुर सेवा ।। (पृ. ९०६)

सतिगुरु सेवी सबदि सालाही ।। (पृ. १०४८)

पूर्व सस्कारों के बहाव में जीव का 'मन' (lower conscious) हमेशा बहुत तेज गति से अनेक दिशाओं में भटकता रहता है। समस्त धार्मिक साधनाओं का मुख्य उद्देश्य 'मन' को घड़ना ही है। जप, तप, हठ तथा अन्य अनेक कठिन शारीरिक तथा मानसिक कर्म काण्ड द्वारा मन का भेद नहीं मिलता। जीव के मन

का भटकाव, विकारी दशा तथा इसके अन्य अनेक सूक्ष्म भेद, केवल 'शबद' द्वारा ही समझे तथा बूझे जा सकते हैं ।

गुर कै सबदि मनु भेदीऐ सदा वसै हरि नालि ।। (पृ. –५४८)

हरि मंदरु सबदे खोजीऐ हरि नामो लेहु सम्हालि ।। (पृ. –१३४६)

वाहिगुरू का अस्तित्व तथा उसकी रचना मन, बुद्धि, देश, काल, अक्षर आदि से दूर है, इसलिए –

सुणि वडा आखै सभु कोइ ।। केवडु वडा डीठा होइ ।। (पृ. –९)

अनुसार उस बेअंत प्रभु की **सिफ्त सलाह** को वही ब्यान कर सकता है, जिसे **प्रभु की उपस्थिति प्राप्त है** । इस लिए **गुर–शबद द्वारा ही प्रभु की आश्चर्यजनक सिफ्त सलाह का आनन्द अनुभव किया जा सकता है ।**

अनदिनु कीरतनु सदा करहि गुर कै सबदि अपारा ।। (पृ. ५९३)

गुर कै सबदि सलाहीऐ हरि नामि समावै ।। (पृ. ७९१)

गुरमुखि नामि सबदि सालाहे ।। (पृ. १०५५)

सच्चे मालिक की **महिमा** सच्ची है तथा उसकी बोली अथाह, 'प्रेम' वाली है । इसलिए विस्मादमय सिफ्त तथा ईश्वरीय प्रेम की बोली बोल कर ही हम प्रभु की भक्ति कर सकते हैं । परन्तु 'विस्मादमय सिफ्त' तथा 'ईश्वरीय प्रेम' का आनन्द स्वयं नहीं अनुभव कर सकते । **इस बेअंत प्रेम वाली बोली का रस तथा स्वाद अनुभव करने के लिए ही सतिगुरू जी ने कृपा करके 'धुर की बाणी' या 'शबद रूपी' अनंत भक्ति भंडार प्रदान किया है ।**

गुर कै सबदि सदा हरि धिआए
एहा भगति हरि भावणिआ ।। (पृ. १२२)

गुरमुखि गुण गावै सदा निरमलु
सबदे भगति करावणिआ ।। (पृ. १२५)

सची भगति गुर सबद पिआरि ।। (पृ. १५९)

अनदिनु भगति गुर सबदी होइ ॥
गुरमति विरला बूझै कोइ ॥ (पृ. १६१)

जीव को दुर्लभ तथा अमूल्य **'जीवन'** सेवा, सिमरन तथा दिव्य गुणों का वाणिज्य – व्यपार करने के लिए प्रदान किया गया था । परन्तु अनेक निम्न रुचियों तथा अज्ञानता के कारण, मनुष्य का सारा 'हीरे जैसा जनम' मायिकी विस्माद में प्रवृत हो कर 'कौड़ी बदले' चला जाता है । **ईश्वरीय 'वाणिज्य – व्यापार' केवल शबद द्वारा ही हो सकता है ।**

गुरमुखा हरि धनु खटिआ गुर कै सबदि वीचारि ॥ (पृ. १४१४)

नावै का वापारी होवै गुर सबदी को पाइदा ॥ (पृ. १०६२)

गुर कै सबदि वणजनि वापारी नदरी आपि **मिलाइदा** ॥ (पृ. १०५९)

इहु वखरु वापारी सो दृड़ै भाई **गुर सबदि करे वीचारु** ॥ (पृ. ६३६)

शबद के प्यार, श्रद्धा तथा अनुभव विचार द्वारा सहज ही जिज्ञासु का मायामोह जल जाता है ।

हउ वारी जीउ वारी माइआ **मोहु सबदि जलावणिआ ॥** (पृ. १२९)

माइआ अगनि जलै संसारे ॥

माइआ मोहु बिनसि जाइगा उबरे सबदि वीचारी (पृ. 911)

गुरमुखि निवारै सबदि वीचारे ॥ (पृ. ûúþù)

नानक माइआ मोहु सबदि जलाइ ॥ (पृ. ११७६)

(क्रमशः .....)